सुबह सिंह यादव

जलवायु परिवर्तन एवं जलवायु चुस्त कृषि

जलवायु परिवर्तन के कारण विगत कई वर्षों में फसल चक्र में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है जिससे गेहूं एवं चना आदि फसलों के क्षेत्रफल में गिरावट देखी गई है। अनुमान है कि चारा सम्बन्धित अनाज का उत्पादन 2020 तक 2–14 प्रतिशत तक गिर जायेगा तथा 2050 तक इसके उत्पादन में और भी तीव्र गिरावट आयेगी, जबकि गंगा के मैदान में गेहूं के उत्पादन में 51 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की जायेगी। धान की खेती के लिए मौजूदा तापमान पहले से ही नाजुक स्थिति में पहुंच चुका है। हाल ही में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार यह अनुमान लगाया गया है कि 2050 तक खाद्यान्नों के उत्पादन में 18 प्रतिशत की गिरावट आयेगी।

जलवायु परिवर्तन अर्थ केन्द्रित विकास का परिणाम है जिसे 21वीं शताब्दी की सबसे बड़ी चुनौती के रूप में देखा जा रहा है। विकास मानव की अपनी क्षमताओं की पहचान और उसमें वृद्धि कराने वाली और बेहतर जीवन शैली प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाने वाली अनवरत प्रक्रिया है। अतः विश्व जनसंख्या के बढ़ने और जीवन शैली में आए परिवर्तन से खाद्य की मांग बढी है, लेकिन बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए फसलों का उत्पादन उस अपेक्षित स्तर तक नहीं बढ़ पाया जितनी की मांग बढ़ी। कृषि पर जलवायु के नकारात्मक प्रभाव से यह चुनौती और गहरा रही है क्योंकि जलवायु परिवर्तन से कृषि प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो रही है, उपज घट रही है और मौसमी परिस्थितियां पलट रही हैं। उपज के वर्तमान स्तर को बनाये रखने के लिए तथा आवश्यकता के अनुरूप उत्पादन बढ़ाने के लिए बड़े पैमाने पर विनियोग आवश्यक है। विश्व बैंक के अनुसार वर्तमान में कुल ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का लगभग 19-29 प्रतिशत कृषि से होता है, जिससे जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और 21वीं शताब्दी के अंत तक खाद्यान्नों के उत्पादन में 10 प्रतिशत कमी आ सकती है।

जलवायु परिवर्तन क्या है?

प्राकृतिक, मशीनरी एवं वैज्ञानिक प्रक्रियाओं, जैसे कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन आदि ग्रीन हाउस गैसों के कारण पृथ्वी की जलवायु में हुए दीर्घकालीन परिवर्तनों को जलवायु परिवर्तन कहा जाता है। ये गैस वायुमंडलीय क्षेत्र में जमा हो जाती हैं और गर्मी को वायुमंडल में ही रोके रखती हैं, जिसके कारण ग्लोबल वार्मिंग होती है और जलवायु परिवर्तन होता है। ऋतु परिवर्तन, वैश्विक तापमान में वृद्धि, समुद्र के स्तर में बढ़ोतरी, फसल चक्र में बदलाव के कारण न केवल हमारे बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी भूस्खलन, सुनामी, अकाल, महामारी, जन पलायन तथा स्वास्थ्य के लिए बड़ी आपदाएं हैं। पृथ्वी के औसत तापमान में पिछले 100 वर्षों में 0.74 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है। इंटर गवर्नमेंट पैनल फॉर क्लाइमेट चेंज के अनुसार यह इस शताब्दी के अंत तक 1.8 से 4 डिग्री सेल्सियस हो जाएगा जिसका कृषि उत्पादन, पशुधन, मछली पालन आदि पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ेगा अर्थात् दोनों ही अर्थों में यह तापमान इन क्षेत्रों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा।

जलवायु परिवर्तन के कारण

(1) विगत् 4-5 दशकों में तथाकथित विकास की चाह में प्रकृति का अंधाधुंध शोषण हुआ है तथा विश्व में उपभोक्तावादी संस्कृति का उदय हुआ है जिसके दुष्परिणाम से आज विश्व जलवायु परिवर्तन जैसे गंभीर संकट से जूझ रहा है। तापमान

बढ़ने का मुख्य कारण वातावरण में ग्रीन हाउस गैस जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, मिथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन और सल्फर ऑक्साइड आदि की मात्रा में वृद्धि होना है। ये गैसें औद्योगिक कारखानों एवं कृषि क्षेत्र से उत्सर्जित होती हैं और पृथ्वी के वातावरण में एक आवरण बना देती हैं जो सूर्य से आने वाले प्रकाश के एक भाग को वापस नहीं जाने देती जिससे पृथ्वी का तापमान बढ़ता है। इसे हम ग्रीन हाउस प्रभाव भी कह सकते हैं।

(2) वनों की अनियमित कटाई करने से वन क्षेत्र में निरन्तर कमी आ रही है। भारत में जलाऊ लकड़ी, उपलों और वनस्पति अपशिष्ट की आवश्यकता क्रमशः 19.16, 10.5 और 5.9 करोड़ टन आंकी गई है। वर्तमान में प्रधानमंत्री उज्जवला योजना के गति पकड़ने के कारण रसोई गैस की अभिवृद्धित उपलब्धि से जलाऊ लकड़ी की मात्रा कम हो सकती है, लेकिन वनों की कटाई अभी भी जारी है तथा उस अनुपात में वन लगाए भी नहीं जा रहे हैं, इससे भी जलवायु परिवर्तन ने विकराल रूप ले लिया है। पर्यावरण प्रदूषण भी जलवायु परिवर्तन का एक सशक्त कारण है। मानव ने विकास के नाम पर पर्यावरण से बहुत छेड़छाड़ की है जिसके कारण पर्यावरण अवकर्षण आरंभ हुआ है। इसका मुख्य कारण प्रदूषण है जो पर्यावरण के विविध तत्वों की प्राकृतिक क्रियाओं में अवरोध उत्पन्न कर पारिस्थितिक तंत्र में असंतुलन तो उत्पन्न करता ही है, साथ में मानव को भी अनेक प्रकार के नुकसान पहुंचाता है।

(3) अन्य प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन भी जलवायु परिवर्तन के लिए एक बड़ी सीमा तक उत्तरदायी है। मानव विकास की गाथा वास्तव में उसके प्राकृतिक संसाधनों की कहानी है। विकास के प्रारंभिक दौर में मानव का इन संसाधनों में सामंजस्य था जिससे वह निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर होता गया, भले ही इसके कारण सीमित आबादी, जरूरतें एवं

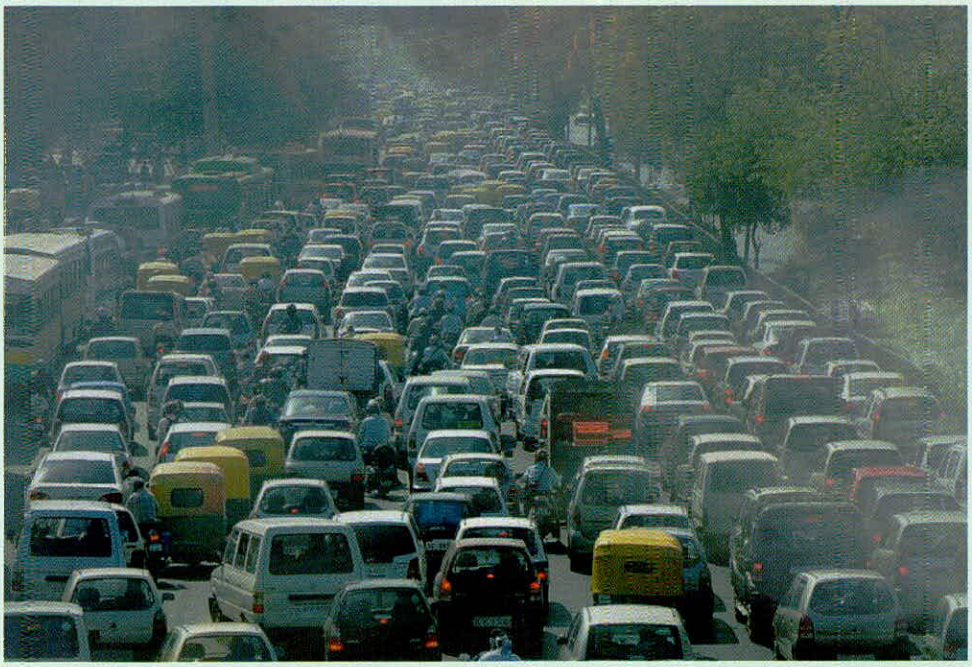

वाहनों की बढ़ती संख्या भी है जलवायु परिवर्तन का कारण।

तकनीकी ज्ञान की कमी रहे हों। लेकिन जैसे-जैसे औद्योगिक एवं तकनीकी प्रगति तीव्रतर होती चली तो एक ओर प्रकृति के शोषण में वृद्धि होती गई तो दूसरी ओर उसका कुप्रभाव प्रकोप के रूप में शुरू हो गया। विकास की इस दौड़ में शायद मानव के पास यह सोचने का समय नहीं था कि प्राकृतिक साधनों का ऐसा अनियंत्रित एवं अनियमित प्रयोग विकास के स्थान पर ऐसी समस्याओं को जन्म देगा जो उसके स्वयं के अस्तित्व के लिए संकट बन जाऐगी। आज जलवायु परिवर्तन एक ऐसी विकट समस्या के रूप में ही मुंह बाएं खड़ी है। इसे हिमयुग के पदार्पण के रूप में भी देखा जा सकता है। वैज्ञानिक अवधारणाओं के अनुसार धरती का हिमयुग में चले जाना और फिर वर्षों बाद बाहर आना स्वाभाविक तौर पर जारी सतत् प्रक्रिया का हिस्सा है। पृथ्वी के हिमयुग से बाहर निकलने की प्रक्रिया के बारे में कहा जाता है कि समुद्र की तरंग से धरती गर्म होती है। औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि एवं परिवहन क्रांति ने इस समस्या को और अधिक विकट बना दिया है। सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति हुई। तत्पश्चात् औद्योगिक विकास की दौड़ प्रारंभ हुई क्योंकि ऐसा करना विकास एवं प्रगति का पर्यायवाची बन गया था। इन उद्योगों की चिमनियों से निकलते धुंए तथा औद्योगिक अपशिष्टों से जल प्रदूषण तथा वायु प्रदूषण फैला। औद्योगिक विकास चक्र में प्रकृति पिसती गई और मानव शुद्ध हवा के लिए भी तरसता रहा। वास्तव में इस संकट का मुख्य कारण औद्योगीकरण ही है।

(4) वर्तमान युग में सभी प्रकार के परिवहन के विकास ने मानव को अत्यधिक गतिशील बना दिया है। किंतु इस विकास के दुष्परिणाम आज हमें जलवायु परिवर्तन के विविध आयामों के रूप में भुगतने पड़ रहे हैं। इनमें से एक है ग्लोबल वार्मिंग। परिवहन के अत्यधिक प्रचलन और वाहनों के धुंए से आज वायुमंडल दूषित हो रहा है जिससे मानव, जीव-जन्तुओं यहां तक कि वनस्पति पर भी हानिकारक प्रभाव पड़ रहा है। यह स्थिति नगरों एवं महानगरों में बहुत ही भयानक रूप ले चुकी है जिसके कारण भारत एवं चीन में "ऑड इवन" का फार्मूला अपनाया जाने लगा है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

(1) जलवायु परिवर्तन के कारण विगत कई वर्षों में फसल चक्र में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है जिससे गेहूं एवं चना आदि फसलों के क्षेत्रफल में गिरावट देखी गई है। अनुमान है कि चारा सम्बन्धित अनाज का उत्पादन 2020 तक 2-14 प्रतिशत तक गिर जायेगा तथा 2050 तक इसके उत्पादन में और भी तीव्र गिरावट आयेगी, जबकि गंगा के मैदान में गेहूं के उत्पादन में 51 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की जायेगी। धान की खेती के लिए मौजूदा तापमान पहले से ही नाजुक स्थिति में पहुंच चुका है। हाल ही में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार यह अनुमान लगाया गया है कि 2050 तक खाद्यान्नों के उत्पादन में 18 प्रतिशत की गिरावट आयेगी।

(2) जलवायु परिवर्तन के कारण मिट्टी, जल और जैव विविधता बुरी तरह से प्रभावित हुई है। विश्व बैंक के आंकड़ों से विदित होता है कि हर 9 में से एक व्यक्ति भूखा रहता है। विकासशील देशों में 12.9 प्रतिशत जनसंख्या अल्पपोषित है। साथ में यह भी पूर्वानुमान लगाया गया है कि सन् 2050 तक 9 अरब जनसंख्या का पेट

भरने के लिए लगभग 70 प्रतिशत अधिक फसल उगानी होगी।

(3) जलवायु परिवर्तन से कृषि उत्पादन सर्वाधिक कुप्रभावित होता है क्योंकि कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से सर्वाधिक संवेदनशील क्षेत्र है। विगत् वर्षों में भारत में तापमान में वृद्धि एवं मानसून की बदलती प्रकृति का कृषि पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। हाल ही के वर्षों में फरवरी-मार्च महीनों में तापमान में वृद्धि के कारण पूरे देश में गेहूं और जौ के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

(4) मौसम की असामान्य परिस्थितियां जैसे एक दिन में अधिक वर्षा होना, पाला पड़ना, सूखे का लम्बा अन्तराल, अत्यधिक गर्मी, तूफानों की संख्या आदि में विगत् वर्षो में वृद्धि देखी गई है जिससे फसल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

(5) किसानों, मछुआरों, मजदूरों, महिलाओं की आजीविका व खाद्य सुरक्षा की चुनौती गरीब व विकासशील देशों में भयावह रूप लेती जा रही है। प्रतिवर्ष लगभग 3 लाख लोगों की मृत्यु व 1.2 ट्रिलियन डॉलर की आर्थिक हानि का दोष जलवायु परिवर्तन को ही दिया जा सकता है। इन्टरगवर्नमेंट पैनल फॉर क्लाइमेट चेंज के अनुसार वर्ष 2050 तक पर्यावरण के कारणों से पलायन करने वालों की संख्या लगभग 150 मिलियन होगी। केवल एशिया पैसेफिक क्षेत्र से वर्ष 2010-11 में जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पन्न विपत्तियों से विस्थापित होने वालों की संख्या 42 मिलियन थी। मौजूदा जलवायु परिवर्तन के कारण पड़ने वाले संभावित प्रभाव भारत की अर्थव्यवस्था के विकास और संवृद्धि पर कुछ इस तरह से नकारात्मक असर डालेंगे कि उससे कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं होगा। इनमें से कुछ संभावित प्रभाव तो निकट भविष्य में ही 2040 तक महसूस किए जा सकेंगे, जबकि कुछ प्रभाव लम्बे समय के दौरान यानी लगभग 2100 तक देखने को मिलेंगे।

(6) औद्योगिक क्रांति से लेकर अब तक एक-तिहाई परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत खर्च हो चुके हैं। इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप आर्कटिक बर्फ की चादर और हिमनद अभूतपूर्व रूप से पिघल रहे हैं, महासागरों का अम्लीकरण बढ़ रहा है और भूमि लगातार बंजर होती जा रही है। प्राकृतिक आपदाओं के कारण हो रहे नुकसान की वजह से कृषि को बचाना चिंता का विषय बन गया है। जलवायु परिवर्तन विकास की गति के लिए बड़ा खतरा बन ही गया है। इसका पहला कारण बाढ़, सूखा, गर्म हवाएं, चक्रवात, आंधी की लहरें आदि हैं, वहीं दूसरा कारण (अवसंरचना, दायरा और सेवाओं) पारितंत्रों का क्षरण या बदलाव, खाद्य उत्पादन में गिरावट, जल उपलब्धता की कमी तथा आजीविका पर नकारात्मक प्रभाव आदि हैं। समुद्र के जल स्तर में वृद्धि होने से फसल चक्र में परिवर्तन हो रहा है।

(7) भारत में जलवायु परिवर्तन एक बड़ी चिंता का विषय है। मध्यावधि जलवायु परिवर्तनों से गंभीर नकारात्मक प्रभावों का अंदेशा है। यह पूर्वानुमान लगाया गया है कि ऊष्मा की मात्रा और वितरण के अनुसार उपज 4.5 प्रतिशत से 9 प्रतिशत तक कम हो सकती है। मोटे तौर पर प्रति वर्ष सकल घरेलू उत्पाद का 1.5 प्रतिशत तक उपज कम हो सकती है। ग्लोबल वार्मिंग से वर्ष 2020 तक दूध का उत्पादन 1.5 से 2.0 मिलियन टन और वर्ष 2050 तक 15 मिलियन टन कम होने की संभावना है। इसका मछली प्रजनन, उसके प्रवास और पैदावार पर भी प्रभाव पड़ सकता है। पाले के कुप्रभाव से संवेदनशील फसलों जैसे चना, सरसों, धनिया, आंवला, अरण्डी आदि का उत्पादन प्रभावित हुआ है।

(8) वर्तमान जलवायु परिवर्तन की अवस्थिति भविष्य में जैव विविधता संरक्षण के लिए खतरा है, तथापि जैव विविधता विशेषकर जंगल और वृक्ष पर आधारित जैविक कृषि जलवायु परिवर्तन के खतरे को कम कर सकती है और इस चुनौती से निपटने के लिए मानव क्षमता को बढ़ा सकती है।

विगत् 4–5 दशकों में तथाकथित विकास की चाह में प्रकृति का अंधाधुंध शोषण हुआ है तथा विश्व में उपभोक्तावादी संस्कृति का उदय हुआ है जिसके दुष्परिणाम से आज विश्व जलवायु परिवर्तन जैसे गंभीर संकट से जूझ रहा है। तापमान बढ़ने का मुख्य कारण वातावरण में ग्रीन हाउस गैस जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, मिथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन और सल्फर ऑक्साइड आदि की मात्रा में वृद्धि होना है। ये गैसें औद्योगिक कारखानों एवं कृषि क्षेत्र से उत्सर्जित होती हैं और पृथ्वी के वातावरण में एक आवरण बना देती हैं जो सूर्य से आने वाले प्रकाश के एक भाग को वापस नहीं जाने देती जिससे पृथ्वी का तापमान बढ़ता है। इसे हम ग्रीन हाउस प्रभाव भी कह सकते हैं।

जलवायु के अन्तर्गत दो तत्वों का प्रमुख रूप से समावेश होता है-पहला जल व दूसरा वायु। इन दोनों तत्वों का संतुलित रहना मानव स्वास्थ्य के लिए अति-आवश्यक है। आज जलवायु परिवर्तन का तकाजा यह है कि सरकार और समाज मिलकर एक ओर शिक्षा, कुशल जैविक कृषि, कुटीर ग्रामोद्योग, सार्वजनिक वाहन, बिना ईंधन के वाहन आदि की बेहतरी व संरक्षण में लगे, तो दूसरी ओर धन का अपव्यय रोके, कचरा कम करें, पलायन व जनसंख्या नियंत्रित करें, फसलोत्तर प्रबंधन प्रभावी बनाएं, नदियाँ बचाएं, भूजल भण्डार बढ़ाएं इत्यादि।

जलवायु चुस्त कृषि

जलवायु चुस्त कृषि को संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन ने एक पद्धति के रूप में विकसित किया है। इसके अन्तर्गत जमीन, मवेशी, वन और मछली प्रबंधन सम्मिलित है। जलवायु चुस्त कृषि का मूल उद्देश्य खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन की आपस में जुड़ी (सम्बद्ध) चुनौती से पार पाना है। जलवायु चुस्त कृषि को ऐसी कृषि के रूप में परिभाषित किया है जिसमें उत्पादन निरंतर बढ़े, क्षमता विकास, ग्रीन हाउस उत्सर्जन यथासंभव कम हो या खत्म हो और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा तथा विकास के लक्ष्य प्राप्त किये जा सकें। जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि सर्वाधिक असुरक्षित क्षेत्र है। वर्षा की पद्धति में परिवर्तन का परिणाम, जल की अत्यंत कमी अथवा बाढ़ हो सकते हैं। बढ़ते तापमान से फसल बुवाई मौसम में परिवर्तन, यहां तक कि उपज में कमी आ सकती है। पर्यावरण पर और भी

प्राकृतिक आपदाओं से हो रही है कृषि हानि।

प्रभाव पड़ सकते हैं जिनसे समग्र रूप से कृषि उत्पादन क्षतिग्रस्त हो सकता है। इसलिए -

(1) मृदा उर्वरता उन्नत बनाने और उसके कार्बन तत्व हटाने हेतु कृषि पद्धतियों में जरूरी बदलाव लाना वांछनीय है।

(2) जल का विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चित करने हेतु कृषि जल-प्रबंधन में बदलाव लाना आवश्यक है।

(3) जलवायु के अनुसार लचीलापन बढाने के लिए कृषि का विविधीकरण सहायक है।

(4) कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी, कृषि सलाहकार सेवाओं और सूचना प्रणालियों का विकास सम्पूर्ण रणनीति के लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है। इसके लिए नवाचार नीतियां अपनानी होंगी, जिनमें निम्न शामिल हैं:-

(अ) विभिन्न क्षेत्रों के भीतरी एवं उनके बीच साधन आवंटन में बदलाव।

(ब) जोखिम बांटने और जोखिम कम करने वाले निवेशों पर अधिक ध्यान।

(स) निवेश के स्थानिक लक्ष्य निर्धारण में सुधार।

(5) विद्यमान हानिकारक नीतियों को दूर करना जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को बढ़ा देती हैं और कृषि की ग्रीन हाउस गैस का उत्सर्जन कम करना, कार्बन तथा जल शोधन और जैव विविधता जैसी अन्य कृषि पारिस्थितिकी सेवाओं के मूल्यांकन से स्थायी कृषि प्रणालियों को प्रोत्साहन।

जलवायु चुस्त कृषि के उद्देश्य

जलवायु चुस्त कृषि का उद्देश्य एक साथ तीन लक्ष्यों को प्राप्त करना है:-

(अ) **उत्पादन वृद्धि खाद्य** और पोषण सुविधा के लिए अधिक कृषि उत्पादन और विश्व के 75 प्रतिशत गरीबों की आय में वृद्धि, जिनमें से अधिकतर अपनी आजीविका के लिए कृषि तथा सम्बद्ध क्रियाकलापों पर निर्भर हैं।

(ब) **क्षमता विकास**-सूखे, कीटों, बीमारियों के प्रति असुरक्षा और अन्य नुकसान को कम करना तथा कम वर्षा व विपरीत मौसमी परिस्थितियों में भी बेहतर उत्पादन क्षमता विकसित करना।

(स) **उत्सर्जन में कमी**-प्रत्येक कैलोरी या किलो उत्पादन पर उर्त्सजन कम करना, वन कटाई से बचना और वातावरण से कार्बन को कम करने के उपाय करना।

जलवायु चुस्त कृषि के उद्देश्य को संक्षेप में इस प्रकार उल्लेखित किया जा सकता है:-

यह महसूस किया गया है कि बाजारों में सुधार, कृषि नीतियों में परिवर्तन, सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि और आपदाओं के लिये उचित तैयारी करना जैसे प्रतिक्रियात्मक अनुकूलनों की अपनी सीमाएं है। अतः खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन की अंतर संबंधित चुनौतियों के समाधान के लिए जलवायु चुस्त कृषि के सक्रिय प्रचार की आवश्यकता है। यह कार्य पोषणीय विकास के तीन आयामों अर्थात्-(क) आर्थिक कृषि आय, खाद्य सुरक्षा और विकास की साम्यिक वृद्धि के लिए पोषणीय वृद्धिशील कृषि उत्पादकता, (ख) सामाजिक-विविध स्तरों पर जलवायु परिवर्तन के लिए कृषि और खाद्य सुरक्षा के लिए लचीलेपन को अपनाना और निर्मित करना, और (ग) पर्यावणीय-कृषि(फसलों, पशुधनों तथा मत्स्यपालन सहित) से ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम अथवा समाप्त करना, कृषि संबंधी आपदाओं की समस्या के समाधान के लिए भारत में जलवायु चुस्त कृषि को बढ़ावा देने की आवश्यकता है क्योंकि इससे किसानों की आय बढ़ सकती है।

विश्व बैंक समूह और जलवायु चुस्त कृषि

विश्व बैंक वर्तमान में जलवायु चुस्त कृषि को आगे बढ़ा रहा है और इस संगठन ने अपनी जलवायु परिवर्तन कार्ययोजना में 2019 तक 100 प्रतिशत जलवायु चुस्त कृषि परिचालन के लिए प्रतिबद्धता जताई है। दूसरी ओर विश्व बैंक समूह पोर्टफोलियों भी आने वाले समय में अनुकूलन और क्षमता विकास को बढ़ाएगा। सदाबहार कृषि को अपनाने वाले अफ्रीकी किसानों को महंगे खादों का इस्तेमाल किए बिना ही बेहतरीन परिणाम मिल रहे हैं। उनका फसल उत्पादन लगभग 30 प्रतिशत और कभी-कभी इससे ज्यादा बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए जांबिया में मक्के को फेर्डबिया पेड़ों के नीचे उगाने से उत्पादन तीन गुना बढ़ गया।

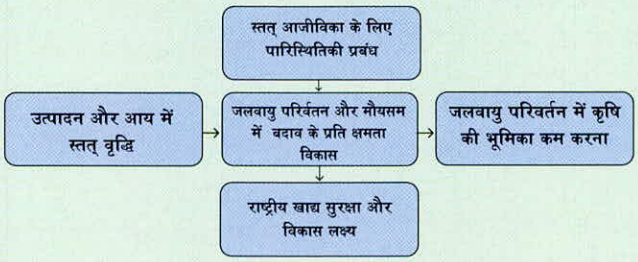

विश्व बैंक द्वारा जलवायु चुस्त कृषि की दिशा में किए गए कुछ प्रयास इस प्रकार हैं:-

(1) उरूग्वे में प्राकृतिक संसाधनों का सतत् प्रबंधन और जलवायु परिवर्तन परियोजना इस दिशा में एक ऐसा ही प्रयास है। इस परियोजना के अन्तर्गत विभिन्न पहलों के जरिए गहन सतत कार्यक्रमों का सहयोग किया जा रहा है। इनमें कृषि सूचना एवं निर्णय सहयोग की स्थापना और मिट्टी प्रबंधन योजना तैयार करने जैसी पहलें शामिल हैं।

(2) मोरेक्को की समावेशी हरित वृद्धि परियोजना कृषि मौसम विज्ञान संबंधी सूचनाएं प्रदान कर और डायरेक्ट सीडर जैसी नई व क्षमता विकास वाली तकनीकों का प्रसार कर राष्ट्रीय हरित विकास एजेण्डा को सहयोग प्रदान कर रही है।

(3) सेनेगल में पश्चिम अफ्रीका कृषि उत्पादकता कार्यक्रम और इसके सहयोगियों ने ज्वार तथा जौ की सात नई, ज्यादा उत्पादकता वाली, जल्दी पकने वाली और सूखे की स्थिति को झेलने में सक्षम किस्में विकसित की हैं। वर्ष 2012 में जारी की गई ये किस्में किसानों के बीच वितरित की गई और इसके सकारात्मक नतीजे मिले हैं।

जलवायु चुस्त कृषि को संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन ने एक पद्धति के रूप में विकसित किया है। इसके अन्तर्गत जमीन, मवेशी, वन और मछली प्रबंधन सम्मिलित है। जलवायु चुस्त कृषि का मूल उद्देश्य खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन की आपस में जुड़ी (सम्बद्ध) चुनौती से पार पाना है। जलवायु चुस्त कृषि को ऐसी कृषि के रूप में परिभाषित किया है जिसमें उत्पादन निरंतर बढ़े, क्षमता विकास, ग्रीन हाउस उर्त्सजन यथासंभव कम हो या खत्म हो और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा तथा विकास के लक्ष्य प्राप्त किये जा सकें। जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि सर्वाधिक असुरक्षित क्षेत्र है। वर्षा की पद्धति में परिवर्तन का परिणाम, जल की अत्यंत कमी अथवा बाढ़ हो सकते हैं। बढ़ते तापमान से फसल बुवाई मौसम में परिवर्तन, यहां तक कि उपज में कमी आ सकती है। पर्यावरण पर और भी प्रभाव पड़ सकते हैं जिनसे समग्र रूप से कृषि उत्पादन क्षतिग्रस्त हो सकता है।

(4) इथियोपिया में हंबो समुदाय से सहयोग प्राप्त प्राकृतिक पुनरूत्पादन परियोजना के जरिये 2700 हैक्टेयर के वन क्षेत्र में जैव विविधता दोबारा स्थापित करने में मदद मिली। इससे आय बढ़ाने वाली लकड़ी और शहद व फल जैसे अन्य उत्पादों का उत्पादन भी बढ़ा।

जलवायु परिवर्तन से बचाव के उपाय

(1) जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों से बचने के लिए टिकाऊ खेती को बढ़ावा दिया जाना चाहिए जिसमें परम्परागत एवं नवीन तकनीकी का समावेश हो। इसमें फसल चक्र, हरी खाद, जैविक खाद, रोग एवं कीट नियंत्रण हेतु बायो-पैस्टीसाइड का उपयोग किया जाना चाहिए ताकि वातावरण प्रदूषण एवं तापमान वृद्धि के प्रभावों को कम किया जा सके।

(2) समन्वित कीट प्रबंधन (IPM), समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन (INM), समन्वित खरपतवार प्रबंधन (IWM), समन्वित पौद्य-व्याधि प्रबंधन (IDM) को बढ़ावा देना। इस प्रकार समन्वित कृषि प्रणाली का सार्थक उपयोग करके जलवायु के प्रतिकूल प्रभावों को रोका जा सकता है।

(3) मौसम की अनियमित दशाओं जैसे अधिक तापमान, पाला, सूखा, नमी की कमी इत्यादि से होने वाले नुक्सानों को कम करने में, फसल विविधीकरण महत्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ रबी में गेहूं व मेथी के बजाय जौ, चना, ईसबगोल, राजगीरा इत्यादि बोये तथा खरीफ में मूंगफली की जगह बाजरा, मूंग, मोठ, चंवला, ग्वार व अरण्डी की बुवाई करें जिससे जलवायु की अनियमित दशाओं से फसलों की उत्पादकता में स्थिरता बनी रहे।

(4) सूखे के प्रभाव को कम करने के लिए सल्फोहाईड्रिल रसायनों का छिड़काव किया जाए। मौसम पूर्वानुमान से संबंधित जानकारी को उपयोग में लाते हुए फसलों में कृषि कार्य संपादित किए जाएं। साथ में अधिक तापमान के प्रभाव को कम करने के लिए फव्वारा व बूंद-बूंद सिंचाई को बढ़ावा दिया जाए।

सौर ऊर्जा से संचालित वाहन : एक बेहतर विकल्प।

(5) ऊर्जा स्त्रोत के रूप में डीजल के उपयोग को कम करने के लिए सौर ऊर्जा से संचालित यंत्रों को बढ़ावा दिया जाए। उदाहरण के लिए सोलर लाईट, सोलर पम्प एवं सोलर लालटेन आदि के उपयोग को बढ़ावा देना होगा। भूमि की क्षारीयता को कम करने के लिए जिप्सम का प्रयोग किया जाए। साथ ही प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का लाभ उठाया जाना चाहिए।

(6) जीवन रक्षक सिंचाई हेतु जल संग्रहण ढांचों, जैसे सामुदायिक जल स्त्रोत फार्म पौण्ड, खेत तलाई आदि का निर्माण कराया जाए। पारिस्थितिकी के अनुसार सूखा सहनशीलता, कम समय में पकने वाली, कम से कम मांग वाली फसलों व किस्मों का चयन किया जाए। इसके अतिरिक्त शुष्क खेती की उन्नत तकनीकों जैसे- नमी संरक्षण, गर्मी की जुताई, अन्तराशस्यन, मिश्रित खेती आदि को अपनाया जाए।

(7) एकीकृत कृषि प्रणाली द्वारा कृषि के अतिरिक्त पशुपालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, मुर्गीपालन, शूकरपालन, बत्तख पालन, झींगापालन, मशरूम उत्पादन आदि को अपनाया जाए। साथ में पाले पड़ने की संभावना दिखाई देते ही फसल पर गंधक के तेजाब का 0.1 प्रतिशत (एक मिलीलीटर प्रति लीटर पानी) घोल बनाकर छिड़काव करें। कार्बन प्रबंधन की दिशा में पहले कदम के रूप में भण्डारित कार्बन डाई ऑक्साइड का उपयोग इसे आकर्षित बनाता है। यह जोखिम रहित विकल्प है और इससे मूल्यवर्धित उत्पाद प्राप्त होते है। जैविक रूप से कार्बन डाइ ऑक्साइड प्रकाश संश्लेषण में कार्बन सिंक उत्पन्न करने तथा वनों को बढ़ावा देने में सहायता करती है।

(8) कृषि वानिकी एवं सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत कृषि उद्यानिकी या कृषि वानिकी चारागाह, खेती जलवायु परिवर्तन के कुप्रभाव को कम करने में सहायक है। जल्दी बढने वाले वृक्षों को इसमें प्राथमिकता देनी चाहिए। कृषि वानिकी से भूमि में कार्बन की मात्रा में वृद्धि होती है। भूमि में कार्बन की मात्रा बढ़ने के कारण जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कम हो जाता है तथा वृक्षों द्वारा कार्बन डाईऑक्साइड के अवशोषण से वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा में कमी होगी, जिससे ग्रीन हाउस प्रभाव कम हो जाएगा।

(9) वातावरण में कार्बन डॉईऑक्साइड की सघनता बढ़ना जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण है, अतः इस गैस के उर्त्सजन में कमी और वातावरण से इसका पृथक्करण जलवायु परिवर्तन के खतरों को कम करने की प्रमुख आवश्यकता है। जैव विविधता और पर्यावरण सेवाओं का अन्तर्राष्ट्रीय मंच और विकासशील देशों में वन कटाई एवं वन निम्नीकरण से उत्सर्जन की कमी की संयुक्त राष्ट्र योजना इस दशक की दो बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय पहलें हैं, जिनका लक्ष्य वैश्विक जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों और विकासशील देशों में मानव कल्याण की कमजोर स्थिति से निपटने के लिए जैव विविधता प्रबंधन करना है।

(10) जलवायु परिवर्तन के समाधान के प्रयास अब विविध पद्धतियों-उत्सर्जन में कमी, जलवायु परिवर्तन का सामना करने के लिए गरीबों की क्षमता में वृद्धि और वातावरण से कार्बन डाई ऑक्साइड को हटाकर, इत्यादि तरीकों द्वारा किया जा सकता है। भारत सहित विश्व के देशों का अनिवार्य विकास, संपोषणीय विकास धारणा का एक और तत्व है जिसे एसडीजी की रूपरेखा में सुस्पष्ट रूप से पहचान मिली है।

(11) यद्यपि तापमान में वृद्धि या कमी अथवा अधिक वर्षा के परिणाम एक जैसे होंगे, किन्तु अनूकूलन एवं शमन के लिए कार्य योजनाएं स्थानीयता से युक्त होनी चाहिए। इस हेतु पंचायत के स्तर पर जलवायु जोखिम प्रबंधन केन्द्र बनाने होंगे और सामुदायिक जलवायु जोखिम प्रबंधकों को प्रशिक्षित करना होगा। ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में पारस्परिक सहमति वाली कमी करने में सहयोग की अपनी नीति को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 1 अक्टूबर, 2015 को दो बड़े निर्णय लिए- (i) 2030 तक सकल घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन तीव्रता में 2005 के स्तर की अपेक्षा 32 से 35 प्रतिशत की कमी लाना और (ii) 2030 तक लगभग 40 प्रतिशत बिजली का उत्पादन अजीवाश्मीय ईंधन आधारित स्त्रोतों जैसे परमाणु, सौर, पवन, बायोमास एवं बायोगैस से करना।

(12) विश्व का लगभग 97 प्रतिशत जल संसाधन समुद्री जल है। अब हैलोफाइट (नमक सहने वाला पौधा) और मत्स्यपालन के द्वारा जैवलवणीय कृषि के लिए संभावना है।

स्थानीय स्तर पर कार्बन प्रबंधन : बायो गैस एक बेहतर उपाय।

हैलोफाइट को संरक्षित करने और जलवायु से अप्रभावित रहने वाली तटीय कृषि प्रणालियां तैयार करने हेतु प्रजननकर्ताओं को हैलोफाइट उपलब्ध कराने हेतु दो संस्थानों की स्थापना की गई है। वास्तव में स्थानीय स्तर पर कार्बन के साथ विकास में योगदान देने का सबसे प्रभावी तरीका "प्रत्येक खेत में बायोगैस संयंत्र, कम उर्वरक, पेड़ तथा एक तालाब" के सिद्धांत का पालन करता है।

जलवायु परिवर्तन से निपटने के वैश्विक प्रयास

वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए गंभीर प्रयास आंरभ हुए है, जहां संयुक्त राष्ट्र संघ की महती भूमिका है। 1992 में रियो सम्मेलन में इस समस्या को सतत् विकास के प्रारूप में लाकर इसको हल करने का कारगर प्रयास किया गया। प्रतिवर्ष "जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र प्रारूप कंवेंशन" के अन्तर्गत होने वाले "कान्फ्रेंस ऑफ पार्टिज सम्मेलन, क्योटो, बाली सम्मेलन, दोहा सम्मेलन, कैनकुन सम्मेलन और 30 नवम्बर से 11 दिसम्बर, 2015 में सम्पन्न पेरिस सम्मेलन इस समस्या से निपटने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास है। उदाहरणार्थ 2012 में रियो +20 सम्मेलन में सतत विकास की प्रक्रिया के ढांचे में जलवायु परिवर्तन की समस्या पर गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श किया गया। पेरिस में आयोजित कॉप-21 में विश्व तापमान को वृद्धि 2 डिग्री सेन्टीग्रेड से कम रखने पर आम सहमति बनी। सभी राष्ट्रों ने स्वैच्छिक राष्ट्रीय निर्धारित योगदान के अन्तर्गत अपनी प्रतिबद्धताएं जाहिर की। लेकिन इन सब सदप्रयासों से वांछित परिणाम उसी दशा में आ सकते हैं, जब गरीब व विकासशील देशों को तकनीकी व वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाए और विकसित देश अपनी जवाबदेही के प्रति संवेदनशील हों।

पेरिस समझौते में निहित प्रावधानों के क्रियान्वयन की दिशा तय करने के संदर्भ में मारक्केश कॉप-22 महत्वपूर्ण मान लिया गया क्योंकि इसमें पेरिस समझौते के क्रियान्वयन के लिए "पेरिस समझौते पर तदर्थ कार्यदल" का गठन हुआ है। इस कार्यदल के नियम व मार्गदर्शिका तैयार की गई ताकि पेरिस समझौते के कार्यान्वयन की रूपरेखा तैयार हो सके जिनको 2018 तक पूरा करना है। इसे एक बड़ी चुनौती के रूप में देखा जा रहा है। लेकिन इस प्रक्रिया पर सहमति बनाते हुए मारकेश कॉप-22 में काफी हद तक सफलता मिली है। सच बात तो यह है कि पेरिस जलवायु समझौता, अभी एक समझौता भर है। कुल वैश्विक कार्बन उत्सर्जन के लिए जिम्मेवार देशों में से 55 देशों की सहमति के बाद यह समझौता एक कानून में बदलना है। शायद इसी के मध्यनजर 22 अप्रैल, 2016 को संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय पहुंचकर समझौते पर विधिवत हस्ताक्षर करने की बात तय हुई थी। वर्ष 2020 से प्रभावी होने वाले इस समझौते के लक्ष्यों के अनुरूप प्रगति के आंकलन हेतु 2023 से वैश्विक समीक्षा की जाएगी। इसके बाद प्रत्येक 5 वर्ष पर समीक्षा की जाती रहेगी। कॉप-23 का आयोजन फिजी में किया जाएगा। यह आशा की जा रही है कि सम्मेलन इस आइसलैण्ड से जुड़े राष्ट्रों के सरोकारों पर गंभीरतापूवक चिंतंन होंगा। कॉप-22 सम्मेलन में भारत का दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट रहा है। भारत जलवायु परिवर्तन का सामना करने वाले प्रयासों में कोई कसर नहीं छोड़ेगा। भारत सौर ऊर्जा को प्राथमिकता के साथ आगे बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है। जलवायु परिवर्तन का सामना करने हेतु वैश्विक प्रयासों के साथ-साथ वैयक्तिगत स्तर पर किए जाने वाले प्रयास भी महत्वपूर्ण हैं।

संदभ

संपर्क करें:
सुबह सिंह यादव
सहायक महाप्रबंधक
(सेवानिवृत्त)
बैंक ऑफ बड़ौदा, जयपुर